मूरखु सो आहे, जो सचु सुञाणे कीनकी
पाणु पंहिंजो पाण में वेठो विञाए,
समुझ रे सामी चए, धिका नितु खाए,
झाती कीन पाए, घिड़ी पंहिंजे घर में.

सामी साहब इस श्लोक में मूर्ख (अज्ञानी) मनुष्य का लक्षण बताते हुए कहते हैं कि जो मनुष्य 'सत्य' (परमेश्वर) को नहीं पहचानता, वह मूर्ख है। अहंभाव के कारण वह अपने अंदर स्थित परमात्मा को पहचान नहीं सकता। अपने आप में ही वह उस सत्य स्वरूप को गँवा बैठा है। वह भ्रम में पड़कर इधर-उधर भटकते हुए ठोकरें खा रहा है। ईश्वर की तलाश में बाहर भटक रहा है किन्तु अपने ही मन में झाँक कर नहीं देखता, जहाँ ईश्वर/परमात्मा बैठा हुआ है।

सामी साहब ने अपने काव्य में दो प्रकार के जीवों/मनुष्यों का वर्णन किया है। एक वे मनुष्य जो ज्ञानी हैं, समझदार हैं, विवेकवान हैं या जिन्हें अंदर की बूझ है। दूसरे वे, जो अज्ञानी नासमझ या मूर्ख हैं। मराठी संत समर्थ रामदासजी ने भी मूर्खों के लक्षण विस्तार से गिनाये हैं। यहाँ सामी जी मूर्ख मनुष्य का एक प्रधान लक्षण बताते हुए कहते हैं कि वह 'सत्य' (परमात्मा) को पहचानने में असमर्थ होता है। संसार के विषय-सुखों में लिप्त, माया के मोह जाल में फँसा हुआ, राम-नाम के स्मरण से सदा दूर रहने वाला मूर्ख मनुष्य भला सत्य को, परम-सत्य को कैसे जान सकता है? जिसने कभी सत्संगति नहीं की और न ही विवेक धारण किया तथा न ही अपने मन में झाँक कर अंतरात्मा को जानने का प्रयत्न किया, ऐसे मनुष्य को 'सत्य' की प्राप्ति कैसे हो सकती है? वह मूर्ख तो अपने स्वरूप को (अहं ब्रह्मास्मि।) भुला बैठा है और अपने शरीर को ही सत्य मानने लगा है। ऐसे मनुष्य को दु:ख ही दु:ख भोगने पड़ते हैं। हरि-स्मरण से विमुख रहने वाले अज्ञानी जीव की यही नियति है। जिस अज्ञानी ने भगवान से अलग होते ही शरीर को अपना घर मान लिया है, माया के वश होकर अपने 'सच्चिदानंद' स्वरूप को ही भुला दिया है, उसे तो असहनीय दु:ख भोगने ही पड़ते हैं। उसे अनेक जन्मों में भी भटकना पड़ता है। इसलिए अपने कल्याण के लिए, जीवनोद्धार के लिए अंतर्यामी परमात्मा को पहचान कर उसका स्मरण करना चाहिए।

ज्यों नैनन में पूतली, त्यों मालिक घट माँहिं।
मूरख लोग न जानहीं, बाहर ढूँढन जाहिं।।

■